भीष्म साहनी के उपन्यास ‘तमस’ को आलोचना सांप्रदायिकता से जोड़कर देखती रही है। देखना भी चाहिए पाठ के प्राथमिक स्तर पर यह ठीक भी लगता है। लेकिन आलोचना को रचना के प्रथम पाठ पर ही क्यों हर बार अटक जाना चाहिए ? असल में सांप्रदायिकता एक ऐसी घातक वैयक्तिक मनोवृत्ति और सामाजिक प्रवृत्ति रही है जिसने दक्षिण एशिया के जन-जीवन को बिल्कुल तहस-नहस करके रख दिया है। सांप्रदायिकताके सवाल के सामने आते ही हम इतने संवेदनशील हो जाते हैं कि विचार प्रवाह और पद्धति में तेज घुर्णियाँ बनने लग जाती है। इन घुर्णियों से विचार को निकाल ले जाना बड़ा मुश्किल होता है – हम एक ऐसे आत्मविरोध और अंतर्विरोध में फँस जाते हैं कि कई बार ‘सांप्रदायिकता के हल’ को भी ‘सांप्रदायिक नजरिये से’ ही ढूढ़ने लगते हैं। यहीं ‘सांप्रदायिकता’ सफल होती रही है, इसी रास्ते से घुसकर भूत सरसो में अपना डेरा डालता रहा है। ‘तमस’ के पाठ में सांप्रदायिकता पर